

विक्रम संवत्-२०३६, श्रावण सुद्ध-४, गुरुवार, ता. १४-८-१९८०  
 वचनामृत-८१, १००. प्रवचन नं. ७

जैसे स्वभावसे निर्मल रङ्गिकमें लाल-काळे झुलके संयोगसे रंग दिभते हैं तथापि वास्तवमें रङ्गिक रंगा नहीं गया है, वैसे ही स्वभावसे निर्मल आत्मामें क्रोध-मानादि दिभाई हैं तथापि वास्तवमें आत्मद्रव्य उनसे भिन्न है. वस्तुस्वभावमें मलिनता नहीं है. परमाणु पलटकर वर्ण-गंध-रस-स्पर्शसे रहित नहीं होता वैसे ही वस्तुस्वभाव नहीं बदलता. यह तो परसे ऐक्य तोडनेकी बात है. अंतरमें वास्तविक प्रवेश कर तो (परसे) पृथक्ता हो. ८१.

वचनामृत. ८१ बोल. किसीने विभा है कि यह पढना. यह कागज अंदर पडा था, वह पढते हैं. किसीने विभा होगा. 'जैसे स्वभावसे निर्मल रङ्गिकमें लाल-काळे झुलके संयोगसे रंग दिभते हैं...' क्या कहते हैं? रङ्गिक मणि उसका ऐसा स्वभाव है, निर्मल, लेकिन पर्यायमें ऐसी योज्यता है (कि) लाल आदि झुल लो तो पर्यायमें योज्यता है. झुलसे नहीं होता. लकडीके नीचे झुल रभो तो नहीं होता. क्योंकि उसकी योज्यता नहीं है. रङ्गिककी पर्यायकी योज्यतामें लाल-पीले झुलके संयोगसे अपनेसे अंदर लाल-पीला रंग दिभता है, वस्तु स्वरूप ऐसा नहीं है. वस्तु निर्मल है.

'जैसे स्वभावसे निर्मल रङ्गिकमें लाल-काळे झुलके संयोगसे रंग दिभते हैं...'  
 आहा..! रंग दिभते हैं, है नहीं. अंतर स्वरूपमें नहीं है. जैसे निर्मलता..

जेम निर्मलता रे रङ्गिक तणी, तेम ज जव स्वभाव रे..

जेम निर्मलता रे रङ्गिक तणी, तेम ज जव स्वभाव रे..

श्री वीरे धर्म प्रकाशियो, श्री जिनवीरे धर्म प्रकाशियो,

प्रबण कषाय अभाव रे..

कषायके अभावमें भगवानने धर्म बताया. अर्थात् वीतराग भावकी पर्याय प्रगट करनेका धर्म बताया. चारों अनुयोगका सार, चारों अनुयोग है उसका सार, पंचास्तिकायकी १७२ गाथामें कहा है कि चारों अनुयोगका सार वीतरागता है. कोई

कहे कि कथानुयोगमें ऐसा आया है, इलानेमें ऐसा आया है. वहां पाठ है. पंचास्तिकाय १७२ गाथा. संस्कृत है. चारों अनुयोगका सार वीतरागता है. वीतराग पर्याय है. चारों अनुयोगका सार वीतराग पर्याय है. वीतराग पर्याय वीतराग स्वभावमेंसे प्रगट होती है.

जैसे स्फटिक निर्मल है, वैसे भगवान अंदर निर्मलानंद प्रभु, अक समयकी पर्यायके सिवा आनंदकंद निर्मलानंद, उसमें रंग, गंध कुछ नहीं है. उस निर्मलतामें दृष्टि देनेसे वीतराग पर्याय जैसे कला, चारों अनुयोगका सार वीतरागता है. कोई कहे कि कथानुयोगमें व्यवहार कला है, इलाना कला है, ढीकना कला है. वह सब कला है. १७२ गाथा, पंचास्तिकाय. मूल पाठ (है). वीतराग पर्याय है पूरा सार. वीतराग पर्याय उत्पन्न होती है कैसे? वीतराग पर्याय चारों अनुयोगका सार, उत्पन्न कैसे होती है? वीतरागभाव आत्मा है उसमेंसे उत्पन्न होती है. आलाला..!

चारों अनुयोगोंका सार आत्मा चिदानंद निर्मलानंद प्रभु, उसका अवलंबन और आश्रय लेना वह चारों अनुयोगोंका सार है. आलाला..! समझमें आया? पाठ है. कोई कहे कि द्रव्यानुयोगमें अमुक है और कथानुयोगमें व्यवहार प्रधान है, चरणानुयोगमें व्यवहारसे लाभ हो ऐसा है, सब कथनके कोई भी प्रकार हो, परंतु सार तो वीतरागता है. वीतराग धर्म है. वीतराग धर्म है तो वीतरागी पर्याय, प्रथम सम्यग्दर्शन चौथे गुणस्थानमें (होता है), वह वीतरागी पर्याय है. सम्यग्दर्शन कोई चीज ऐसी नहीं है कि श्रद्धा करके मान लिया. सम्यग्दर्शन वीतरागी पर्याय और वीतरागी आनंदके अंशका स्वाद है.

मुमुक्षु :- वीतराग पर्याय भी है और वीतराग..

उत्तर :- स्वाद है. उसका कारण कि अनंत गुण है न? अनंत गुण पर दृष्टि देनेसे अनंत गुणकी पर्यायमें व्यक्तता, सर्व गुणकी व्यक्तता, अनंत गुणकी अक समयकी व्यक्तता प्रगट होती है. अक ही गुणकी प्रगट होती है ऐसा नहीं. जितने गुण है सब गुणकी पर्याय व्यक्त होती है. अज्ञेय नामका गुण है कि जो चौदहवें गुणस्थानमें अज्ञेय होता है, वह चौथे गुणस्थानसे अज्ञेयगुणकी पर्यायकी व्यक्तता अक अंशसे प्रगट होती है. आलाला..! समझमें आया? निर्मलानंद प्रभु... कला न?

‘स्वभावसे निर्मल स्फटिकमें बाल-कावे कूले संयोगसे रंग दिखते हैं तथापि वास्तवमें स्फटिक रंगा नहीं गया है,...’ स्फटिकमें रंग आया नहीं. वैसे राग और द्वेष, पुण्य और पापके विकल्पकी जल पर्यायमें दिजे. वस्तुमें नहीं है. वस्तु तो

निर्मलानंद स्फटिक जैसी है. वीरे जैसा प्रकाश किया. 'जेम निर्मलता स्फटिक तणी, तेम जव स्वभाव, श्री जिनवीरे धर्म प्रकाशियो, प्रबण कषाय अभाव..' कषायका अभाव कइ कि वीतरागभाव कइ. आहाहा..! प्रथम सम्यग्दर्शनकी शुरुआतसे वीतरागता उत्पन्न होती है. सूक्ष्म बात है, प्रभु! वीतराग अवस्थाके बिना चौथा गुणस्थान आता नहीं. क्योंकि आत्मा वीतरागस्वरूप है, आत्मा त्रिकाल वीतरागस्वरूप है. तो वीतराग स्वरूपके अवलंबनसे पर्यायमें वीतरागताका अंश आता है. अरे..! वीतरागताका अंश क्या, अज्ञेय नामके गुणका भी अंश प्रगट होता है. आहाहा..! चौदहवे गुणस्थानमें अज्ञेय होता है. अंश नीचे सम्यग्दर्शनमें प्रगट होता है. क्यों? सर्व गुणांश ते समकित.

समकित यानी क्या? सर्व गुणांश ते समकित. जितने गुण संख्यासे, उन सर्व गुणका अंश व्यक्त हो, उसका नाम समकित है. सर्व गुणांश ते समकित. समकितकी अंश ही पर्याय प्रगट होती है, जैसा नहीं. समकितकी पर्याय प्रगट होती है, आनंदकी होती है, शांतिकी होती है, शांति यानी चारित्र, चारित्रगुण आत्मामें त्रिकाल है. उसका अंश स्थिरता होती है. वीर्यगुण. वीर्य स्वरूपकी रचना करे, शुद्ध रचना करे, वीर्य भी अंश प्रगट होता है. चौथे गुणस्थानमें सर्व अनंत गुणका अंश प्रगट होता है. यह वाक्य कइ यह श्रीमद्कइ कइ. सर्व गुणांश ते समकित.

अपनेमें रहस्यपूर्ण चिह्नोंमें है. टोडरमल. टोडरमलकी रहस्यपूर्ण चिह्नोंमें लिखा है कि चौथे गुणस्थानमें ज्ञानादि अनंत गुणका अंश प्रगट होता है. जैसा पाठ है. मोक्षमार्ग प्रकाशकमें पीछे उवा है. आहाहा..! जितनी संख्या अनंती अनंती गुणकी है, प्रभुका स्वीकार होनेसे, प्रभुके सन्मुख होनेसे पर्याय और रागके विमुख होनेसे, अनंता अनंती संख्या गुणवाली जे चीज, उसमें प्रत्येक गुणका अंश, अनंता अनंता गुण है, अनंता अनंता गुणका अंश पर्यायमें व्यक्तपने प्रगट अनुभवमें आता है. आहाहा..! जैसा मार्ग है. निर्मल स्फटिक मणि जैसा भगवान है. आहाहा..! रंग आदि तो पर्यायमें है. पर्यायमें रंग है यह भी रंगके कारण नहीं है. स्फटिकी योव्यताके कारण है. समजमें आया? आहा..! बात जैसी है. बात-बातमें ईर्क है, प्रभु! लाल और पीला इल है इसलिये यहां लाल-पीला प्रतिबिंब उठा, जैसा नहीं है. स्फटिकी पर्यायका जैसा स्वभाव है.

जैसे लोहा.. दियासली लो, दियासलीसे बीडी पीते हैं तो इस ओर अग्नि है और इस ओर शांति है. दियासली पूरी उष्ण नहीं होती. जैसे लकड़ा हो पांच लथ लंबा, अग्निमें रजो तो ईतना गरम होगा, जितना है उतना. पूरा गरम

नहीं होगा. क्योंकि योग्यता नहीं है. लेकिन बोलेका पांच हाथ लंबा टूकडा हो, वह यह थोडा भी अग्निमें हो तो भी पूरा गरम हो जाता है. पूरा उष्ण हो जाता है. वह अपनी योग्यता है, अग्निसे होता है ऐसा नहीं. आह्लाहा..! गजब बात है, प्रभु!

प्रत्येक गुणकी पर्याय चौथे प्रगट होती है. योग्यताका कारण कला. आह्लाहा..! मार्ग अलग है, प्रभु! ये तो शांतरसका मार्ग है. शांति.. शांति.. शांति. कषायके भावका अभाव. भले अंश अनंतानुबंधीका अभाव. लेकिन अनंत मिथ्यात्व और मिथ्यात्वके साथ कषाय अनंतानुबंधी है. पहले कषायको अनंतानुबंधी क्यों कला? कि अनंत नाम मिथ्यात्वके साथ संबंध है, इसलिये अनंतानुबंधी कला. जहां मिथ्यात्व गया, स्वर्प निर्मलानंद मेरा स्वभाव त्रिकाल निर्मल स्वभाव है. ऐसी जहां दृष्टि हुई, वहां स्थिरताका अंश भी साथमें आया. क्योंकि अनंतानुबंधी कषाय चारित्रमोलकी प्रकृति है. अनंतानुबंधीकी प्रकृति चारित्रमोलकी है. उसके जानेके बाद कुछ तो चारित्र होगा की नहीं? चारित्र नाम भले नहीं देते, लेकिन स्वर्पाचरण चौथे गुणस्थानमें प्रगट होता है. कोई ना कलता हो तो उसे मालूम नहीं है. सम्यग्दर्शनमें स्वर्पश्रद्धा, स्वर्पज्ञान और स्वर्पाचरण तीनों प्रगट होते हैं.

यहां कलते हैं, स्फटिकका निर्मल स्वभाव है, वैसे भगवानका निर्मल स्वभाव है. 'वास्तवमें स्फटिक रंगा नहीं गया है,...' वैसे आत्मामें राग और द्वेष, पुण्य और पापके विकल्पकी जल हो, लेकिन स्वर्प वैसे हुआ नहीं. शुद्ध स्वर्प वैसे हुआ नहीं. वह तो पर्यायमें ऐसा हुआ है. उपर-उपर वैसे हुआ है. अंदर तलमें उसका स्पर्श नहीं है. आह्लाहा..! भगवान आत्मा, उसका जो तल अंदर पूर्ण है, उसमें राग-द्वेषका प्रवेश नहीं. 'वैसे ही स्वभावसे निर्मल आत्मामें क्रोध-मानादि दिखाई दें...' क्रोध, मान, माया अनादिसे दिखाई देते हैं. परंतु वह पर्यायमें दिखाई देते हैं, वस्तुमें नहीं. आह्लाहा..! भ्रमसे देभता है. वह भी पर्यायमें है, वस्तुमें नहीं. वस्तु तो निर्मलानंद परमात्मस्वर्प अतीन्द्रिय सर्वांग आनंदसे भरा हुआ, अतीन्द्रिय आनंदसे भरा हुआ परिपूर्ण है. आह्लाहा..! दिखाई देते हैं. कैसे? जैसे स्फटिकमें रंग दिखाई देते हैं, वैसे भगवान आत्मामें, कर्मसे नहीं. जैसे उस रंगसे प्रतिबिंब नहीं उठता. क्या कला? रंगका झूल आया इसलिये वहां प्रतिबिंब उठता है, जैसे नहीं. उसकी योग्यतासे वहां पर्याय हुई है. आह्लाहा..! जैसे आत्मामें पर्यायमें जो क्रोध, मान है, वह कर्मसे नहीं हुआ है. अपनी योग्यतासे उत्पन्न हुआ है. आह्लाहा..! तीनों चीज अलग है. अंक कर्म अलग, विकारकी पर्याय अलग.

आह्लाहा..! स्फटिक रत्न जैसा चैतन्य स्वभाव निर्मलानंद, वह तो बिलकुल भिन्न है. अरे..! जैसा जो भगवान तेरे पास है. बलिनके वचनमें अक जगल आता है. तेरे पास आनंदका नाथ है. तू ही आनंदका नाथ है, पास क्या? तेरी नजर वहां नहीं जाती और बाहरमें ठसका जैसा और उसका वैसा. बाह्य क्रियाकांडमें डककर वहां अटक गया.

यहां कल कि 'आत्मामें क्रोध-मानादल दलभायी दें तथापल...' तो ली 'वास्तवमें आत्मद्रव्य उनसे भलन्न है.' आह्लाहा..! द्रव्य कली रागरूप लोता नहीं. द्रव्य कली संसारके कोल विकल्परूप लोता नहीं. आह्लाहा..! जैसा जो द्रव्य स्वभाव है वह निर्मल स्फटलक जैसा है. कलते हैं, आत्मद्रव्यमें क्रोधादल दलभते हैं, मानादल देभता है उससे भलन्न है. वास्तवमें तो जैसी चीज है कि अपनी रुचल नहीं लोकर, अपने सलवा पुष्य और पापके सूक्ष्म भाव, उसकी जलसको रुचल है, उसको स्वरूप प्रति द्वेष है. अरुचल है. जलसे रागकी रुचल है, उसे प्रभु प्रति अरुचल है. यहां प्रभु यानी आत्मा कलते हैं. आह्लाहा..!

आनंदधनज श्वेतांबरमें लुजे हैं. उन्होंने कल है, अरुचल द्वेष स्वभाव. भगवान आनंदके नाथ प्रति प्रेम नहीं है और यहां प्रेम है, रागका अक अंश लले शुभ लो, उसमें जो प्रेम लगा है, वह आत्माके प्रति द्वेष है. यहां राग है, यहां द्वेष है. रागका राग है और आत्माके प्रति द्वेष है. आह्लाहा..! सूक्ष्म भात है, बापू! भगवान! तेरी भातको क्या कले? भगवन् स्वरूप पूरा है. उसका पूरा स्वरूप भगवत स्वरूप है. वह तो यमडी, लडी दलभते हैं, वह कोल वस्तु नहीं है. वह तो जडमें यली जलयेगी. अंदर चैतन्यरत्न ललरा. आह्लाहा..! उसमे जो वलकार दलभाल देता है, वलकार दलभता है वह उसमें नहीं है. वह पर्यायमें-अक समयकी दशामें वलकार है. वह कलते हैं, देभो!

क्रोध अनादलसे दलभाल देते हैं. वह तो अनादलसे दलभता है. पहले पर्यायमें शुद्ध था और बादमें अशुद्ध लुआ, जैसा है नहीं. क्या कल? द्रव्य तो शुद्ध ही अनादलसे है. परंतु पर्याय ली अनादलसे शुद्ध थी और बादमें अशुद्ध लुल, जैसा है नहीं. क्या कल, समयमें आया? कलसे कलते हैं. द्रव्य जो शुद्ध है, वह अनादलसे है. और पर्याय जो अशुद्ध दलभती है, वह कर्मसे नहीं, अपनी योज्यतासे जैसी है. लेकलन वह पर्यायमें-अवस्थामें है, स्वभावमें नहीं.

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- नहीं, नहीं. दूसरी अपेक्षा ठसके सलवा लागू नहीं पडती. जैसी वस्तु

है, बैया! यह तो अंतरकी बातें हैं। जिसे बैठे वह बिठाये, दूसरा क्या हो?

पर्यायमें राग द्विभता है, स्वभावमें नहीं। और राग द्विभता है वह कर्मके कारण नहीं। आलाला..! स्फटिकका दृष्टांत दिया न? लाल-पीला प्रतिबिंब उठता है वह अपनी योज्यतासे है। लाल-पीले झूलसे हो तो ठसके नीचे रज दै। ठसके नीचे। ठसमें होना चालिये। लकड़ी लो, लकड़ी। उसके नीचे झूल रजो तो प्रतिबिंब उठना चालिये। उसकी पर्यायमें योज्यता है। आलाला..!

मुमुक्षु :- पर्यायकी योज्यता या द्रव्यकी?

उत्तर :- पर्यायकी योज्यता है। द्रव्य तो जैसा है उसी आनंदका नाथ प्रभु शुद्ध है। आलाला..!

वास्तवमें आत्मद्रव्य क्रोधादि विकारसे। क्रोध, मान, माया, लोभ, विषय वासना, भ्रमसे भिन्न है। आलाला..! 'वस्तु स्वभावमें भविनता नहीं है।' भगवानका वस्तु स्वभाव देखो तो भविनता नहीं है। वह तो उपर पर्यायमें भविनता द्विभती है। संसार पर्यायमें है। संसार बाहर नहीं है। स्त्री, कुटुंब, परिवार, पैसा, लक्ष्मी, दुकान संसार नहीं है। और संसार द्रव्यमें नहीं है। आलाला..! समजमें आया? संसार है उसकी पर्यायमें। संसरणु ठिति संसार। यह शब्द पडा है, प्रवचनसार। अंतर स्वरूप आनंदका नाथ, सिदानंद नाथ ध्रुव, उसमेंसे संसरणु अर्थात् लट ज्ञय। लटकर रागमें आ गया है। राग-द्वेषमें आ गया। ठसलिये संसरणु ठिति संसार। वह संसार है। आलाला..! और ठस संसारका नाश करना है। कोठ बाह्य संसारमें स्त्री-पुत्र छोडकर अकेला किर, कपडे निकालकर, उसी अनंत बार किया। आलाला..!

अंतरमें जो पर्यायमें क्रोध, मानादिकी योज्यता है, वह स्वरूपमें नहीं है। स्वरूपकी दृष्टि करके, स्वरूपका ध्यान करके, स्वरूपमें जाकर, स्वरूपकी भेंट करके अकाकार होता है तो भविनता छूट जाती है। दूसरा कोठ उपाय है नहीं। आलाला..! 'वस्तुस्वभावमें भविनता नहीं है।' अक दृष्टांत दिया है।

जैसे 'परमाणु पलटकर वर्ण-गंध-रस-स्पर्शसे रहित नहीं होता...' परमाणु अक है, वह कभी वर्ण, गंध, रस, स्पर्श गुणके बिना नहीं रह सकता। है? परमाणु पलटकर, पलटकर 'वर्ण-गंध-रस-स्पर्शसे रहित नहीं होता...' आलाला..! क्या कला? परमाणुका स्वभाव जो वर्ण, गंध, रससे रहित है उसी कोठ कले तो उसी नहीं है। वर्ण, गंध, रस, स्पर्श उसका स्वभाव है। तो वह परमाणु वर्ण, गंध, रस, स्पर्श रहित हो गया है, उसी कोठ कले तो द्रव्यका नाश हो गया। आलाला..! परमाणुमें वर्ण, गंध, रस, स्पर्श है। उसका पलटकर अभाव हो ज्ञय, उसी तीन

कालमें नहीं है.

ऐसे भगवान आत्मा,.. आलाहा..! अनंत ज्ञान, दर्शन, आनंदसे भरा है, वह पलटकर कभी विकार नहीं होता. समझमें आया? थोड़ी सूक्ष्म बात है, प्रभु! आला..हा..! परमाणु जैसे वर्ण, गंध, रससे रहित हो सके नहीं, अनादिअनंत परमाणुमें वर्ण, गंध, रस, स्पर्श अनादिअनंत है. वैसे यह भगवान आत्मा अनादिअनंत आनंद और शांतिसे भरा तत्त्व है. उसमें मलिनता है नहीं. आलाहा..! परमाणु रंग बिना होता नहीं, वैसे भगवान राग बिना ही होता है. आलाहा..! रागसहित होता तो.. राग पर्यायमें है, लेकिन वस्तुमें राग है नहीं. क्रोध है नहीं, मान है नहीं. भ्रमणा भी उसके अंदर नहीं है. भ्रमणा सब पर्यायमें है. आलाहा..! थोड़ा सूक्ष्म पडा. वस्तु ऐसी है, प्रभु! आलाहा..!

यहां तो सब भगवान है, भाई! भगवान ही है. वह तो एक पर्यायमें रागकी अकता, जो उसकी योज्यता है, योज्यता तो उसकी है, कर्मसे नहीं है. जैसे स्फटिकमें प्रतिबिंब उठा है, लाल-पीले झूल है उससे नहीं, अपनी योज्यतासे लुई है. वैसे यह विकार कर्मसे नहीं, अपनी योज्यतासे विकार है. लेकिन प्रभु तो त्रिकाल निर्मलानंद है. परमाणु पलटकर वर्ण, गंध, रस, स्पर्श रहित होता नहीं. ऐसे तीन लोकका नाथ प्रभु पलटकर रागरूप कभी होता नहीं. आलाहा..! ऐसा वस्तु स्वभाव (है). किसके साथ वाद करे? वादविवाद भी कहां है? नियमसारमें आगे प्रभुने कहा है, आलाहा..! यीज ऐसी है. ... ऐसा पाठ है नियमसारका. अनेक प्रकारके श्रव, अनेक प्रकारकी उसकी लब्धिका उघाड, अनेक प्रकारके श्रव. नाना प्रकारके कर्म अर्थात् कर्म भिन्न-भिन्न है. स्वसमय और परसमयके साथ वाद मत करना. नियमसारमें पाठ है. क्योंकि वह यीज तो अनुभवकी यीज है. आला..! वाद करने जायेगा तो व्यवहारके बहुत वचन आते हैं, उसे आगे रभेगा. आलाहा..! गाथामें कहा है. स्वसमय और परसमयके साथ वादविवाद करना नहीं. स्वसमयसे भी. आलाहा..! जैन धर्ममें रहकर भी जैनधर्मके लोगोंके साथ वादविवाद नहीं. वह वस्तु ऐसी अगम्य है.

वह यहां कहते हैं. 'परमाणु पलटकर...' आलाहा..! वर्ण यानी रंग, गंध, रस, स्पर्श रहित नहीं होता. 'वैसे ही वस्तु स्वभाव नहीं बदलता.' भगवान चैतन्य आनंद स्वरूप.. आलाहा..! परमाणु रंगसे अरंग नहीं होता, ऐसे भगवान आत्मा निर्मलानंद त्रिकालसे कभी विकाररूप नहीं होता. वस्तु विकाररूप नहीं होती. आलाहा..! यहां तो वस्तुकी श्रद्धाकी बात है. अनुभवकी बात है. आलाहा..! 'वैसे ही वस्तुस्वभाव नहीं बदलता.' जैसे परमाणुका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श पलटकर

क्या हो जाय? परमाणु अड़पी हो जाय? वर्षा, गंध, रस, स्पर्शसे रलित हो तो अड़पी हो जाय? कभी होता नहीं. वैसे भगवान तीन लोकका नाथ, चैतन्यज्योति जललण ज्योति स्वयं ज्योति सुभधाम, वह पलटकर क्या हो जाय? क्या राग हो जाय? जड हो जाय? आलाहा..! आला..हा..! ऐसी चीज प्रभु तेरे पास है, तू ही है. पास कलनेमें थोडा (भेद रहता है).

‘यह तो परसे अकत्व तोडनेकी बात है.’ अलन तो कहते हैं कि यह मैंने क्यों कहा? कि परसे अकत्व तोडनेकी बात है. विकार आत्मामें नहीं है और विकार पर्यायमें है, अक समयकी पर्यायमें है, यह बात क्यों कही? कि विकार तोडनेको कहा. क्योंकि विकार लभेशा नहीं है, वस्तु नित्य है. आलाहा..! भगवान आत्मा ज्ञानानंद सलज्जन्त स्वरूप त्रिकावी है, अनाद्विअनंत है और विकार है वह क्षणिक अक समयका है. जैसे परमाणु पलटकर वर्षा रलित नहीं होता, वैसे भगवान पलटकर कभी विकाररूप नहीं होता. चाहे तो निगोदमें चला जाय. निगोदमें अंगूलीके असंख्य भागमें, असंख्यवे भागमें. असंख्य औदारिक शरीर है. निगोद. अक शरीरमें अनंतगुना जव है. अक-अक जवमें साथमें दो-दो शरीर है. तैजस और कार्माण. आलाहा..!

अक अंगूलीके असंख्य भागमें असंख्य तो निगोदके औदारिक शरीर है. आलाहा..! और अक-अक शरीरमें अनंत-अनंत जव है. और अक-अक जवका दो-दो शरीर साथमें है. सबकी संख्या अंगूलीका असंख्यवां भाग. गजब बात है! ऐसा कहकर क्या कहते हैं? कि क्षेत्रकी कोई महिमा नहीं है. छोटा-बडा क्षेत्र नहीं, वस्तुका स्वभाव क्या है? आलाहा..! बडा क्षेत्र हो तो बडी चीज कलनेमें आये, छोटा क्षेत्र हो तो छोटी कही जाय, ऐसा नहीं है. छोटी-बडी कोई क्षेत्रसे नहीं है. आलाहा..!

जितने गुण आकाशमें है, अनंताअनंत. तीन कालके समयसे अनंतगुना. उतने गुण अक परमाणुमें है. अरे.. प्रभु! क्योंकि द्रव्य है न? जितने गुण आकाशमें है, उतनी संख्या अक परमाणुमें है. आलाहा..! उतनी संख्या आत्मामें है. परमाणुमें जड है. भगवानमें सब चेतन है. आला..! वह स्वभाव कभी पलटता नहीं.

‘यह तो परसे अकत्व तोडनेकी बात है.’ यह बात क्यों की? कि राग और स्वभाव दोनों बिलकूल भिन्न है. बिलकूल भिन्न है. रागसे कुछ भी लाभ हो, शुभराग करते-करते अंदरमें प्रवेश होगा, वह बात बिलकूल जूठ है. पहले शुभराग करे, शुभराग करते-करते अंदरमें जाना होगा. दुःख करते-करते सुखमें जाना होगा, ऐसा है. दुःख वेदते-वेदते आनंदमें जाना होगा, ऐसी वह बात है. आलाहा..! सूक्ष्म बात है, प्रभु! यहां अलिन कहती है, यह क्यों कहा? ‘यह तो परसे अकत्व तोडनेकी

भात है.' आला..! प्रभु! तेरेमें आनंद भरा है न, नाथ! तेरी पर्यायमें जो थोडा विकार है, वह तो क्षणिक है. वह तो तेरी नजर गिरते ही टूट जायेगा. आला..! तेरी नजर फिर, पर उपर तेरी नजर है, निधान पर नजर आये तो अक समयमें टूट जायेगा. आला..! ऐसी ताकत है, प्रभु!

'अंतरमें वास्तविक प्रवेश कर...' अहिन कलती है.. थोडा बोले थे, बहुत थोडा बोलती है. यह भी थोडा बोले होंगे, अहनोंने विष लिया. इसलिये बाहर आया, नहीं तो बाहर भी नहीं आये. बाहरसे मर गये हैं. आला..! 'अंतरमें वास्तविक प्रवेश कर...' जिसमें विकार नहीं, निर्मलानंद प्रभु, जैसे परमाणु पलटकर वरिष्ठित नहीं होता, वैसे भगवान पलटकर, अनंत ज्ञान, दर्शन पलटकर विकार नहीं होता. अनंतज्ञान, अनंतदर्शन अनंत यतुष्टय. जैसे परमाणुका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श पलटता नहीं, वैसे आत्मामें अनंत यतुष्टय भरा है. आला..! अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतआनंद, अनंतवीर्य. उस यतुष्टयसे रलित आत्मा कभी होता नहीं, तीन कालमें होता नहीं. ऐसा अंदरमें प्रवेश कर, प्रभु! ऐसा कलते हैं. तुजे महिमा लगती हो.. आला..! यह चीज मलाप्रभु है. भले उसकी पर्यायमें अनादिसे विकार है. लेकिन उसका समय कितना? अक समय. विकारकी. अपनी मौजूदगी त्रिकाल है. आला..! त्रिकाली पर नजर कर, अंतर प्रवेश कर. 'तो (परसे) पृथकता हो.' तो परसे पृथक नाम जुदा हो जाय, भेदज्ञान हो जाय. आला..!

कषायका अंश उपर-उपर है और अंदरकी चीजमें तो अकेला माल-आनंदका माल भरा है. अतीन्द्रिय ज्ञान, अतीन्द्रिय आनंद, अतीन्द्रिय वीर्य, अतीन्द्रिय शांति, अतीन्द्रिय प्रभुता, अतीन्द्रिय प्रभुता ऐसी अनंत-अनंत शक्तिका दल-पिंड पडा है. आला..! उसमें प्रवेश कर, प्रभु! आला..! उस चीजकी ओर नजर कर. चाले कोई भी निगोदका भव किया, लेकिन उसका द्रव्य तो जो है सो है. आला..! निगोदका भव. अक अक्षरके अनंतवे भागमें विकास है. फिर भी द्रव्य तो परिपूर्ण परमात्मस्वरूप ही पडा है. आला..! आला..!

'अंतरमें वास्तविक प्रवेश कर तो (परसे) पृथकता हो.' तो परसे भिन्नता हो जायेगी. ८१ (पूरा हुआ). उसके बाद? १००. कोई विषनेवालेने विषा है. किसीने रखा था.

**‘मैं अनादिअनंत मुक्त हूँ’-ईस प्रकार शुद्ध आत्मद्रव्य पर दृष्टि देनेसे शुद्ध पर्याय प्रगट होती है. ‘द्रव्य तो मुक्त है, मुक्तिकी पर्यायको आना हो तो आये’ इस प्रकार द्रव्यके प्रति आलंजन और पर्यायके प्रति उपेक्षापृति होने पर स्वाभाविक शुद्ध पर्याय प्रगट होती ही है. १००.**

१००. ‘मैं अनादिअनंत मुक्त हूँ’. मुक्त सिद्ध होते हैं, वल सादि अनंत सिद्ध है. सिद्ध होते हैं वल सादि अनंत है, प्रभु अनादिअनंत है. मुक्तदशा सादि-शुद्धात है, फिर अंत नहीं है. सादिअनंत है. और प्रभु आत्मा है वल तो अनादिअनंत है. उसकी आदि भी नहीं और अंत नहीं है. इसकी तो आदि होगी, सिद्धकी सादि हो गयी. सिद्ध पर्याय जब होगी तब आदि हो गयी. आत्मामें ऐसा है नहीं. आलाला..! ‘मैं अनादिअनंत मुक्त हूँ’. आलाला..! अनादिअनंत मुक्त हूँ. कभी बंधा नहीं. आलाला..! अंतरमें बिछानेकी बात है, प्रभु! अंतरमें दृष्टि करके, रुचि करके, पोषण करके अनुभव करने लायक वल है. बाकी तो सब दुनियाकी बातें बहुत है.

‘ईस प्रकार शुद्ध आत्मद्रव्य पर दृष्टि देनेसे...’ शुद्ध आत्मद्रव्य पर दृष्टि देनेसे ‘शुद्ध पर्याय प्रगट होती है.’ आलाला..! शुद्ध पर दृष्टि देनेसे.. वल तो समयसारमें गाथा है. ... शुद्ध होता है, .. अशुद्ध होता है. गाथा है, समयसारमें. आत्मा त्रिकावी शुद्ध है, ऐसी दृष्टि करे और अंदर करे तो वल शुद्ध हो जाता है. और आत्माको अशुद्ध माने तो वल चारों गतिमें अशुद्ध रहता है. समयसारमें दो गाथा है. आलाला..! यहां कला, ‘मैं तो अनादिअनंत मुक्त हूँ’. आलाला..! ‘ईस प्रकार शुद्ध आत्मद्रव्य पर दृष्टि देनेसे शुद्ध पर्याय प्रगट होती है.’ शुद्ध पर्याय कोई दूसरे प्रकारसे प्रगट नहीं होती. आलाला..! अनादिअनंत ध्रुव भगवान, जिसमें पर्यायका बहलना भी नहीं है, उस पर दृष्टि देनेसे पर्याय प्रगट होती है-शुद्ध पर्याय प्रगट होती है.

शक्तिरूप तो है ऐसा कलनेमें आता है. ध्रुवमें सब पर्यायकी शक्ति तो है. क्यों? कि जितनी पर्याय होती है वल पर्याय अक समय रहकर विलय होती है. विलय-नाश होती है. नाश कहांसे हो? सत् है. उत्पादव्ययध्रुव युक्तं सत्. व्यय भी सत् है. आलाला..! उत्पादव्ययध्रुव युक्तं सत्. तो व्यय भी सत् है. तो नाश होकर कहां जाय? व्यय होकर अंदर द्रव्यमें प्रवेश करती है. व्ययकी पर्याय नाश

होकर द्रव्यमें जाती है. आह..! है न? 'शुद्ध पर्याय प्रगट होती है.' क्योंकि पर्याय शक्तिरूप तो अंदर सब पडी है. लेकिन अंतर उसका स्वीकार.. ओहो..! गहराईमें उसका स्वीकार करनेसे, पर्यायके तलमें जाने पर जो परमात्मा पूर्ण स्वरूप विराजता है, वह द्रव्य तो मुक्त है. तेरे ज्यावमें आ जायेगा, तुझे आनंद होगा. आह..! सम्यग्दर्शनमें आनंद होगा. अतीन्द्रिय आनंदका स्वाद आना. आह..! क्योंकि अनंत गुण है. सब गुणका अंश प्रगट होता है. तो आनंद भी प्रगट होता है. स्वरूपकी रचनावाला वीर्य भी प्रगट होता है. और प्रभुता, उसमें प्रभुता पडी है आत्मामें. समयसारमें ४७ शक्ति है न. उसमें एक प्रभुता शक्ति है. आह..! उस प्रभुता शक्तिमेंसे प्रभुता आती है. पर्यायमें प्रभुता आता है. आह..! चौथे गुणस्थानमें प्रभुताका अंश बाहर आता है. आह..! ऐसा मार्ग!

'द्रव्य तो मुक्त है, मुक्तिकी पर्यायको आना हो तो आये'. क्या कला? मेरी दृष्टि तो द्रव्य पर-ध्रुव पर है. पर्याय होनेवाली होगी. मेरे अंदर क्या है? मैं तो ध्रुव पर दृष्टि रखता हूं. आह..! 'मुक्तिकी पर्यायको आना हो तो आये.' 'द्रव्य तो मुक्त है.' उस पर दृष्टि देनेसे पर्यायमें मुक्ति होगी ही. उसमें होगी ही. आह..! मुक्त भगवान, उसकी पर्याय मुक्त, अपूर्ण पर्याय मुक्त, पूर्ण पर्याय मुक्त, वस्तु मुक्त. आह..! क्या कला? भगवान वस्तु मुक्त, उसका मार्ग जो मोक्षमार्ग अंदर है, अल्प है, वह भी मुक्त और पूर्ण सिद्ध दशा वह भी मुक्त. उसका मुक्तके साथ संबंध है. रागके साथ एक समयका संबंध है, वह कोई मूल चीज नहीं है. आह..! कठिन काम है, भाई! दुकान चलानी, यह सब करना, इसका समय कब मिले? बापू! ये तो समय है. आह..! समय एक बार आयेगा और देह छूट जायेगा. ऐसा समय आयेगा कि मावूम नहीं पड़ेगा, बैठे-बैठे देह छूट जायगा, इटाकसे. अर्भी यहां एक लडका था, दस सालका. जैसे बैठा था. कुछ नहीं था. कलने लगा, मुझे गलेमें कुछ है. कोई व्याधि बताई थी. बैठा था, कुछ नहीं. दस मिनटमें देह छूट गया. पहले हीराभाईके मकानमें रहते थे. हीराभाईके मकानमें रहते थे न, उनके लडकेका लडका, उसका लडका. उसका नाम कुछ होगा, कुछ कहते थे.

यहां तो कहते हैं, जैसे वह रोग क्षणमें देहका अंत लाता है, वैसे तीन लोकके नाथके सन्मुख देहने पर (संसारका) क्षणमें नाश होकर मोक्ष होता है. आह..! अरे..! वह चीज क्या है? अंदर कौन कितनी ताकत और क्या शक्ति है? आह..! जिसकी तुलना सिद्धके साथ भी नहीं. सिद्धकी पर्यायके साथ नहीं, द्रव्यके साथ है. आह..! सिद्धकी पर्याय जैसी अनंती पर्याय तो एक-एक गुणमें पडी है. ऐसा

द्रव्य स्वभाव.. आलाला..!

‘द्रव्य तो मुक्त है, मुक्तिकी पर्यायिको आना हो तो आये’. आलाला..! बलन आये नहीं है अभी. दोपहरको आयेंगे. शरीरमें कमजोरी है. सिद्धकी पर्यायिको होनी हो तो हो, मुझे क्या? मैं तो त्रिकावी आनंदकंद घुव हूं. आलाला..! जैसा कहते हैं. मैं तो त्रिकावी अनादिअनंत आनंद, वीर्य, शांति और प्रभुताका पिंड भरा है. सिद्धपर्यायिको आनेवाली होगी तो आयेगी. आलाला..! उसकी भी हमको परवाल नहीं है. हमने तो अंदर प्रभु देखा है. घुव स्वर्ण घुव भगवान. उस दृष्टिके आगे सिद्धकी कोई किंमत नहीं है.

‘ईस प्रकार द्रव्यके प्रति आलंबन और पर्यायिके प्रति उपेक्षावृत्ति...’ ईस प्रकार द्रव्यके प्रति आलंबन. त्रिकावी घुव भगवानका आलंबन. कोई बाह्य आलंबनसे वल प्रगट हो, जैसी चीज है नहीं. भगवानका आलंबन है... तकरार होती है न? स्थानकवासी और देरावासीमें. श्वेतांबर कहे कि आलंबन चालिये, वल कहता है आलंबन नहीं चालिये. बाहरका आलंबन. यहां तो बाहरका आलंबन काम नहीं करता. कोई आलंबन नहीं है. निरालंबी भगवान त्रिलोकनाथ है. जिसको कोई अपेक्षा लागू पडती नहीं. आलाला..! ‘ईस प्रकार द्रव्यके प्रति आलंबन और पर्यायिके प्रति उपेक्षावृत्ति...’ पर्यायिके प्रति उपेक्षा. दरकार नहीं कैसी है. आलाला..!

मुमुक्षु :- ज्ञानीको मुक्ति नहीं चालिये न?

उत्तर :- दरकार घुव पर है. मुक्ति आती है. घुवके जेठमें कहते हैं. मेरा लक्ष्य घुव पर है, मुक्ति आयेगी ही. आनेवाली आयेगी तो आयेगी ही. मुक्तिकी अनंती-अनंती पर्यायिको जिसमें भरी है. आलाला..! अक केवलज्ञानकी अक पर्यायिको सादिअनंत केवलज्ञानकी पर्यायिको सादिअनंत अक ज्ञानगुणमें पडी है. भगवान आत्माका अक ज्ञानगुण, उसमें सादिअनंत जो केवलज्ञान, कभी अंत नहीं. अक पर्यायिको (जैसी) अनंती पर्यायिको उससे अनंतगुनी अंदर पडी है. आलाला..! अरे..! प्रभु! तूने आत्मा देखा नहीं, आत्माको ज्ञाना नहीं. आत्मा किसे कहना? आलाला..! यह बात विस्मृत हो गई है और दूसरे रास्ते पर चड गई है. प्रवृत्तिके रास्ते पर चड गई है. आलाला..!

यहां तो कहते हैं, ‘द्रव्यके प्रति आलंबन और पर्यायिके प्रति उपेक्षावृत्ति...’ पर्यायिको चाले तो मोक्षमार्गकी हो, लेकिन पर्यायिके प्रति उपेक्षा (है). क्योंकि पर्यायिको भी परद्रव्य कहा है. प०वीं गाथा. समजे? नियमसार. पर्यायिको परद्रव्य कहा है. स्वद्रव्य मेरा यहां है, तो परद्रव्य तो आयेगा ही. पर्यायिको उसमेंसे निकलकर आयेगी

ही. निःसंदेह, निःशंक. जो पाया वह गिर जायेगा, ऐसी शंका ज्ञानीको है नहीं. पंचमहालके प्राणीके लिये ऐसा लिया है. ३८ गाथा, ८२ गाथा. मूल पाठमें ऐसा लिया है कि श्रोता अप्रतिबुद्ध था, उसे समझया और समझ तो वहां तक कदा, हमारा ज्ञान और दर्शन अप्रतिहत है. गिरेगा नहीं. शंका नहीं है. पंचमहालका प्राणी-श्रोताको प्रगट हुआ वह ऐसी दशा है. कदाचित् अकाद लव हो, उसका कुछ नहीं. आह्लाहा! यीज तो यह है.

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- पत्र ऐसा है न. पत्र ऐसा है न. देजोन! 'मुक्तिकी पर्यायको आना हो तो आये.' आयेगी ही. जहां भगवानको-मूलको पकड लिया. वृक्षके मूलको पकड लिया तो इल-इल तो लेंगे ही. जिसने मूल पकडा, उसे इल-इल तो लेंगे ही. जैसे भगवान आत्माको पकडा, उसमें सिद्धपर्याय तो इल है. इल आकर ही छूटकारा है.

'द्रव्यके प्रति आवंजन और पर्यायके प्रति उपेक्षावृत्ति होने पर स्वाभाविक शुद्ध पर्याय प्रगट होती ही है.' आह्लाहा..! पर्यायके प्रति उपेक्षावृत्ति, याले सो पर्याय चार ज्ञानकी हो, क्षायिक पर्याय हो-क्षायिक समकित, परंतु पर्यायके प्रति उपेक्षावृत्ति. आह्लाहा..! 'पर्यायके प्रति उपेक्षावृत्ति होने पर स्वाभाविक शुद्ध पर्याय प्रगट होती ही है.' ऐसी वस्तुकी स्थिति और मर्यादा है. वह तो पहले आ गया है अपने. जहां चैतन्यकी पर्याय प्रगट हुई, उसकी यदि पूर्णता न हो तो जगतका नाश होगा. पूर्ण दृष्टि जहां हुई और वह साधकपना पूर्ण न हो, तो द्रव्य नहीं रह सकता. द्रव्य न रहे तो, सब द्रव्य नहीं रहते, तो जगत शून्य हो जाये. आह्लाहा..! यह बात पहले आ गयी है. जैसे आत्मामें जो साधकपना उत्पन्न हुआ, उसमें सिद्धपना आयेगा, आयेगा और आयेगा. सिद्धपना न आवे तो उस द्रव्यका नाश हो. साधकपनाका अभाव होता है. साधकका इल सिद्धपद आना चाहिये. वह नहीं आये तो साधकका नाश होने पर द्रव्यका नाश हो जाय. आह्लाहा..! थोड़ी सूक्ष्म बात है. विशेष कहेंगे... (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)